• श्रीश्रीगुरुगौराङ्गौ जयतः •

स वै पुसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे ।

धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेन कथासु यः ।

अहैतुक्यप्रतिहता ययात्मासुप्रसीदति ।

सर्वोत्कृष्ट धर्म है वह जो आत्मा को आनन्द प्रदायक ।
भक्ति अधोक्षज की अहैतुकी विघ्नशून्य अति मंगलदायक ॥

सब धर्मों का श्रेष्ठ रीति से पालन करते जीव निरन्तर ।
किन्तु हरि-कथा-प्रीति न हो श्रम व्यर्थ सभी केवल बंधनकर ।

वर्ष १४ | गौराब्द ४८२, माम—गोविन्द १२, वार—अनिरुद्ध
बुधवार, २६ माघ, सम्वत् २०२५, १२ फरवरी १९६६ | संख्या ६

श्रीगुरुदेवस्तवामृतम्

रघुरूपपदानुगसंतवरं, कलिपावन 'केशव' नामधरम् ।
सुजानार्बुदवन्दितपादपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥१॥

जो श्रीलरघुनाथदास गोस्वामी और श्रीलरूप गोस्वामीके पदानुसरण करनेवाले श्रेष्ठ सन्त हैं, जो कलियुगको पावन करनेवाले 'केशव' (श्रीश्रीभक्तिप्रज्ञान केशव) नामको धारण करनेवाले हैं, और असंख्य सज्जनगण जिनके पादपद्मोंकी वन्दना करते हैं, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥१॥

गुरुदासवरेण्यसुभक्तवरं, गुरुवांछितकर्मविधानकरम् ।
गुरुदासगणाहृतपादपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥२॥

जो गुरुदासों में श्रेष्ठ तथा भक्तोंमें उत्कृष्ट हैं, जो गुरु (श्रील प्रभुपाद) के अन्तरङ्ग कार्यों को सम्पन्न करनेवाले हैं, और जिनके पादपद्मोंका गुरुदासगण (सतीर्थ गुरुभ्रातागण) आदर करते हैं, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥२॥

प्रभुपादमनोरथपूरकरं, प्रभुपादकृपामृतपात्रवरम् ।
प्रभुपादकृपाकृतिरत्नपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥३॥

जो जगद्गुरु श्रील प्रभुपादके मनोरथ (मनोऽभिष्ट) को पूरण करनेवाले हैं, जो श्रील प्रभुपादकी कृपारूपी अमृतको धारण करनेवाले श्रेष्ठ पात्र हैं, जिन्हें कृपा कर श्रील प्रभुपादजीने 'कृतिरत्न' उपाधि प्रदान की थी, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥३॥

भगवत्करुणाघनमूर्त्तिधरं, भवभीतजनाश्रयदातृवरम् ।
पतिताधिकवत्सलपादपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥४॥

जो भगवानकी करुणारूपी जलका वर्षण करनेवाले मेघ सदृश हैं, जो भवभीत (पुनः पुनः जन्म-मरणसे भयभीत) जनोंको आश्रय प्रदान करनेवालोंमें श्रेष्ठ हैं एवं जिनके पादपद्म पतितों पर अधिक वात्सल्य प्रकाश करते हैं, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ॥४॥

श्रुतिशास्त्रविशारदविज्ञवरं, अतिमर्त्यचरित्रसुमूर्त्तिधरम् ।
भुवनेषुविकीर्त्तितगौरपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥५॥

जो श्रुति शास्त्रादिमें पारङ्गत भगवत्तत्वके श्रेष्ठ ज्ञाता हैं, जो अतिमर्त्य चरित्रयुक्त सुमूर्त्ति धारण करनेवाले हैं और जिन्होंने सारे भुवनमें श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुकी महिमाका उत्कृष्ट रूपसे कीर्त्तन किया है, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥५॥

कुलिशादपिकोटिकठोरभरं, कुसुमादपिकोमलभावधरम् ।
शरणागतपालकदिव्यपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥६॥

जो वज्रकी अपेक्षा भी कोटि कठोर स्वभावयुक्त हैं,जो कुसुमकी अपेक्षा भी अत्यन्त कोमल स्वभावपरायण हैं और जिनके दिव्य पादपद्म शरणागत व्यक्तियोंके पालन करनेवाले है, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥६॥

निजसेवकसंशयनाशकरं, निजसेवकतापसुदूरकरम् ।
निजसेवकतारितपादपदं, प्रणमामि सदा श्रीगुरुदेवपदम् ॥७॥

जो अपने सेवकों (शिष्यों) के सन्देहोंका नाश करनेवाले हैं, जो अपने सेवकोंके तापको भली प्रकारसे दूर करनेवाले हैं, जिनके पादपद्मोंने अपने सेवक (श्रीपाद अनङ्गमोहन प्रभु) को दिव्यगति प्रदान की है, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥७॥

कुमताम्बुधिशोषकसूर्यवरं, छलधर्मविखण्डकवज्रधरम् ।
शठकुञ्जरमर्दकसिंहपदं, प्रणमामि सदा श्रीगुरुदेवपदम् ॥८॥

जो कुमतरूपी सागरका शोषण करनेवाले सूर्य सदृश हैं, जो छलधर्मरूपी पर्वतका उत्कृष्ट रूपसे खण्डन करनेवाले वज्रधारी इन्द्रतुल्य हैं और जो शठ (पाषण्डी) रूपी गजयूथका मर्दन करनेवाले सिंह सदृश पदयुक्त हैं, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥८॥

कलिकल्मषखण्डनशक्तिभरं, हरिनामसुकीर्त्तनधर्मरतम् ।
वरदाभयदायकपादपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥९॥

जो कलियुगके कल्मषका खण्डन करनेमें अपार शक्तियुक्त हैं, जो हरिनामके उत्कृष्ट कीर्त्तन रूपी धर्ममें निष्ठित हैं और जिनके पादपद्म वरदान और अभयदान देनेवाले हैं, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥९॥

धरणीजनदुःखसुनाशकरं, धरणीभरहारकसंतवरम् ।
धरणीतलकीर्त्तितपादपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥१०॥

जो भूतलवासी व्यक्तियोंके दुःखका सम्यक् रूपसे नाश करनेमें समर्थ हैं, जो पृथ्वीके भारहरण करनेवाले श्रेष्ठ संत हैं और जिनके पादपद्मोंकी महिमाका सारे भूतलमें कीर्त्तन हो रहा है, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥१०॥

यतिराजशिरोमणिवेशधरं, यतिराजजनार्बुदसेव्यतनुम् ।
यतिधर्मनिरूपितसंतपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥११॥

जो यतिराज (संन्यासी) शिरोमणि स्वरूप हैं, जिनकी सेवा असंख्य संन्यासीगण करते हैं और जिन्होंने यतिधर्मका अपने जीवनमें आचरण कर सुन्दर रूपसे निरूपण किया है, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥११॥

नवखण्डपरिक्रमपातृवरं, नवखण्डसुधाकरभावधरम् ।
नवखण्डसुसेवितसाधुपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥१२॥

जो नवखण्ड (श्रीनवद्वीप धाम) की परिक्रमाकी रक्षा करनेवाले हैं जो नवखण्ड सुधाकर (श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभु) के विप्रलम्भ भावको धारण करनेवाले हैं और जिन्होंने श्रीनवद्वीप धामकी उत्कृष्ट रूपसे सेवा की है, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥१२॥

व्रजभावरसामृतदानपरं, व्रजगोपवधूरसपानरतम् ।
व्रजवाससमुदायकपादपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ॥१३॥

जो व्रजभावरसामृत (व्रजके दास्यरस, सख्यरस, वात्सल्यरस, शृङ्गारभावरूपी उज्ज्वल रसादि रूप अमृत) को प्रदान करनेवाले हैं, जो गोपीभावके आस्वादनमें निरन्तर रत हैं और जिनके पादपद्म व्रजवास प्रदान करनेवाले हैं, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥१३॥

वृषभानुसुताप्रियदासवरं, व्रजनाथवशीकृतभक्तवरम् ।
महदद्भुतपावनपादपदं, प्रणमामि सदा गुरुदेवपदम् ।,१४॥

जो वृषभानुसुता (श्रीमती राधिकाजी) के अत्यन्त प्रिय दास हैं, जो व्रजनाथ (श्रीकृष्ण-चन्द्रजी) को अपने प्रेम भक्तिसे वशीभूत करनेवाले भक्तश्रेष्ठ हैं, जिनके पादपद्म अति अद्भुत रूपसे पावन करनेवाले हैं, ऐसे उन श्रीगुरुदेवके पदयुगमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥

प्रभु, मेरी विनति सुन लीजै

हरि, तेरौ भजन कियौ न जाइ ।
कहा करौं, तेरी प्रबल माया देति मन भरमाइ ॥
जब आवौ साधु संगति, कछुक मन ठहराइ ।
ज्यों गयंद अन्हाइ सरित, बहुरि बहै सुभाइ ॥
बेष धरि धरि हरयौ परधन, साधु-साधु कहाइ ।
जैसे नटवा लोभ कारण करत स्वाँग बनाइ ॥
करौं जतन, न भजौं तुम कौं कछुक मन उपजाइ ।
सूर प्रभु की सबल माया, देति मोहि भुलाइ ॥

श्रीव्यासपूजाके अवसर पर प्रति-निवेदन

महाभारतके आरम्भमें इस मङ्गलाचरण का उद्धरण किया गया है—

"नारायणं नमस्कृत्य नरञ्चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥"

श्रीनारायण श्रीमद्व्यासदेवके आराध्य देवता हैं। श्रीमन् नारायण परमपुरुष पुरुषोत्तम भगवान् हैं और उनकी चिच्छक्तिरसमयी सरस्वती देवी नारायणी हैं। इन श्रीश्रीलक्ष्मी-नारायण युगलको प्रणाम करनेके पश्चात् श्रीगुरुदेव श्रीव्यासजीका जय गान करना ही सनातनी परम्पराकी रीति है। सर्वलोक-पितामह पुरुषोत्तम भगवानके नरमूर्त्ति और प्रतिभूस्वरूप चतुर्मुख ब्रह्मा ही इस जगतके आदि गुरु हैं।

श्रीविष्णुस्वामीपादके अधस्तन श्रीधर-स्वामीपाद कहते हैं—

"वागीशा यस्य वदने लक्ष्मीर्यस्य च वक्षसि ।
यस्यास्ते हृदये संवित् तं नृसिंहमहं भजे ॥"

आदि महान्त गुरु श्रीचतुर्मुख ब्रह्माजी ने हृदयमें श्रीनृसिंहजीकी सम्बिच्छक्ति धारण की थी और सरस्वती देवीने ब्रह्माजीके द्वारा चारों वेदोंका गान किया था। श्रीनारदजीने उसे श्रवण किया था। श्रीनारदजीने इसके पश्चात् उसका कीर्त्तन किया। श्रीव्यासदेवजीने उनके श्रीमुखसे उसे श्रवण किया था।

आधस्तनिक व्यक्तियोंके कल्याणके लिए श्रीव्यासजीने अनुकूल और प्रतिकूल भावसे पुरुषोत्तम भगवान नारायणके चरणानुशीलन करनेके उद्देश्यसे इन दोनों प्रणालीभुक्त धर्म को 'अक्षर धर्म' नाम देकर उसे क्षर-धर्मसे पृथक् किया था।

जिन महाविष्णुने आदि कवि श्रीब्रह्माके हृदयमें चिन्मयी तत्त्वज्ञान का प्रकाश किया था, श्रीनृसिंहलीला उन्हींकी लीला है। इस-लिए श्रीविष्णुस्वामीपादके अधस्तनवर श्रीधर-स्वामीपादने उनके अभीष्टदेव श्रीनारायणके स्वरूपनिर्णय करने जाकर नरसिंह दर्शन रूपी व्यवस्थाद्वारा उनके अनुगत व्यक्तियोंके लिए अक्षरात्मिका मूर्त्ति प्रकाश की थी।

आज श्रीनित्यानन्द प्रभुके पदानुसरणमें श्रीव्यासदेवके श्रीचरणोंमें अर्घ्य प्रदान करनेके लिए हम लोग उपस्थित हुए हैं। यह अर्घ्य प्रदान किया आदिगुरु श्रीब्रह्माजी, उनके अनुगत श्रीनारदजी, उनके अनुगत श्रीव्यास-देवजी और श्रीव्यासानुग श्रीआनन्दतीर्थ मध्वा-चार्यजी, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैतचार्यजी आदिने की थी। गौड़ीयगणोंकी पूजा श्रीनव-

द्वीपमें जगद्गुरु श्रीनित्यानन्द प्रभुने स्वयं की थी। आम्नाय परम्परामें यह कार्य भक्ति अनुष्ठानका एक मुख्य अङ्ग है।

आचार्य लोग श्रीव्यासमुखरित श्रुतिका ही कीर्त्तन किया करते हैं। हम लोग भी उन्हीं का अनुसरण करते हुए श्रीश्रीलगुरुपादपद्ममें अञ्जलि प्रदान करनेके लिए प्रस्तुत हुए हैं। अपरा विद्याके संतोष-विधान करनेके लिए बालकगण गौरशुक्ला पंचमीके दिन अंजलि देते हैं। हम लोग आज माघी कृष्णा-पंचमी के दिन परा विद्यादेवीके श्रीचरणोंमें अंजलि प्रदान कर रहे हैं। यह अंजलि श्रीव्यासदेवजी के श्रीकरकमलों द्वारा उद्भासित हुई है। "यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ। तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।" —इस श्रुति मन्त्रके श्रवण करनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए ही इस श्रीव्यास-पूजा यज्ञ का आवाहन है।

एकदिन श्रीमद् आनन्दतीर्थ मध्वाचार्यजी ने श्रीव्यासपूजामें नियुक्त होकर श्रीव्यासासन पर उपविष्ट होकर आचार्यका कार्य किया था। उनके अनुगत सम्प्रदायके व्यक्ति उनके आनुगत्यका परिचय देते हुए नित्यकाल आम्नाय पारम्पर्यमें श्रीव्यासासनपर उपविष्ट होकर श्रीमद्भागवत-तात्पर्यकी व्याख्या करते हैं। प्रापंचिक विचार द्वारा विचार करने पर अपनी अयोग्यताका अनुभव होता है; इसके द्वारा व्यासासन पर उपवेशन कार्यमें बाधा पहुँचती है। किन्तु श्रीगुरुदेवकी आज्ञाका उल्लंघनरूपी दुष्प्रवृत्ति द्वारा हम किसी प्रकारसे श्रीश्रीलगुरुपादपद्मकी सेवासे विमुख न हो जाय—यही श्रीव्यासदेवजी और श्रीमन्मध्वाचार्यजीके श्रीचरणोंमें हमारी प्रार्थना है। श्रीमध्वमुनिने श्रीव्यासदेवजीका पूजाभिनय प्रदर्शन करते हुए अस्सी वर्ष तक गुरुलीलाभिनय किया था। एक समय उन्होंने भीमरूपसे उदित होकर कृष्ण-विद्वेषी व्यक्तियों को गदाके प्रहारके द्वारा विनाश करते हुए कृष्णसेवाका आदर्श दिखलाया था। उन्होंने दूसरे समय हनुमानजीके रूपमें श्रीरामचन्द्रजी के प्रतिद्वन्द्वियोंका विनाश किया था। वे नित्यकाल वायुरूपसे वैकुण्ठको धारण करते हुए अप्राकृत चिन्मय राज्यकी नित्य अवस्थितिमें सहायता करते हैं। श्रीमद् आनन्दतीर्थ मध्वाचार्यजीका शुक्ला नवमीके दिन अप्रकट-पूजा की जाती है। उन्हींके अधस्तन मदीय गुरुवर्गने श्रीव्यासपूजाके पुरोहितरूपसे मुझे वरण किया है। यह उन लोगोंकी महाभागवत अनुसरण लीलामात्र है। मैं अपने स्वरूपगत परिचयसे श्रीरूपानुगजनोंका अयोग्य असंभाव्य नित्यदास हूँ। इसलिए इस अयोग्यताके कारण ही मेरी यह तात्कालिक विशृङ्खलता उपस्थित हुई है। श्रोतागण यदि मेरी इस धृष्टताको क्षमा कर सकें, तो मैं उनके दास्य-पदमें नियुक्त होनेका अधिकार प्राप्त कर सकूँगा। मेरा कण्ठरोध करनेसे मुझे

श्रीव्यासपूजा करनेका अधिकार मिल न सकेगा। आप लोगोंके निकट मेरी यही सकातर प्रार्थना है कि आप लोगोंने असंख्य महापुरुषोंको श्रीव्यासपूजा करनेका अधिकार प्रदान किया है; अतएव मुझे भी क्षणकालके लिए यह पूजा करनेका अधिकार प्रदान करें।

श्रीव्यासपूजाके पुरोहित होनेके कारण मैं कठिन साधन अवलम्बन कर श्रीव्यासासन पर अधिरोहण करना नहीं चाहता। मैं अपने श्रीगुरुदेव और उनके पूर्व महाजनोंके प्रीतिविधानके लिए जो आराधना कर रहा हूँ, वह अवतारवाद या अवरोहवाद विचार पर प्रतिष्ठित है। मैं बाह्य जड़-जगतके ज्ञान-प्रयास का अवलम्बन करते हुए अजित वस्तु भगवान को पाने की आशा कर प्रतारित होना नहीं चाहता। इसलिए श्रीब्रह्माजीके अधस्तन सम्प्रदायके महापुरुषोंके आदेश, श्रीव्यासानुगत व्यक्तियोंकी आज्ञा और श्रीरूपानुग वैष्णवों की अपार करुणाके प्रति अत्यन्त श्रद्धायुक्त होकर ही आज मैं श्रीरूप गोस्वामीपाद प्रदर्शित भक्तिपथका थोड़ा बहुत वर्णन करते हुए श्रीव्यासदेवजीके श्रीचरणोंमें अंजलि प्रदान कर रहा हूँ। केवल श्रीव्यासदेवजीके श्रीचरणोंमें ही अंजलि नहीं दे रहा हूँ, बल्कि श्रीव्यासानुगत गौड़ीय गुरु वैष्णवोंके श्रीचरणोंमें भी अंजलि देनेके लिए श्रीगुरुदेवकी आज्ञानुसार अधिरोहवादियोंकी नीच प्रवृत्ति को भी परित्याग करनेकी धृष्टता प्रदर्शन कर रहा हूँ। मेरे इस कार्य द्वारा "तृणादपि सुनीच" शिक्षा की अवहेलना नहीं हो रही है। श्रीरूपानुग वैष्णवोंकी महिमा कहने जाकर मेरी "तरोरपि सहिष्णुता" में किसी प्रकारकी बाधा नहीं पहुँच रही है। किसी जड़ प्रतिष्ठामें प्रतिष्ठित होनेकी दुराशाके वशीभूत होकर मैं श्रीगुरुवाक्यका लंघन नहीं कर रहा हूँ। इसलिए मैं श्रीगुरुगौराङ्ग कथित मानदधर्ममें दीक्षित होनेकी अभिलाषासे सीमाबद्धता का परित्यागपूर्वक वैकुण्ठ कथाकी ही पुनरावृत्ति कर रहा हूँ। इस अनुष्ठानके गुण-दोषका मैं फल भोग करनेवाला नहीं हूँ। इसलिए फल या दक्षिणाके रूपमें मैं जागतिक निन्दा-प्रशंसा का प्रार्थी नहीं हूँ। नित्यपार्षद श्रीरूप गोस्वामीपाद और उनके अनुगतजन और भविष्यत् कालके श्रीरूपानुग वैष्णवगण—सभी ही मेरे पूज्य श्रीगुरुदेव श्रीब्रह्मा-नारद-व्यास-मध्व-नित्यानन्दाश्रित आश्रय जातीय भगवद् विग्रह हैं। नित्यकाल उनके आश्रित होने पर ही मैं भुक्ति-मुक्तिरूपी दोनों पिशाचियोंको 'जननी' के रूपमें न जानकर 'पूतना' के रूपमें जानूँगा। मेरी यही प्रार्थना है कि ज्ञान वैराग्यादि भक्ति जननीके उपयुक्त पुत्र होकर मातृसेवाके प्रति उदासीनता प्रकाश न करें—जननीको 'दासी' न समझ बैठें।

श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रीरूप गोस्वामीपादको उत्तमा भक्तिके स्वरूप का परिचय दिया था और श्रीसनातन गोस्वामीको भक्ति

सिद्धान्त-आचार्य रूपसे 'सम्बन्ध'–शिक्षा प्रदान की थी; 'सनातन-शिक्षा' श्रीजीव गोस्वामीपादके हृदयमें प्रतिफलित होकर वे भागवताचार्यके रूपमें उज्ज्वल हुए थे। श्रीरूपानुगत्व मूर्त्तिमती भक्तिस्वरूपसे श्रीरघुनाथदास गोस्वामीपादके स्वरूपानुगत्यको देदीप्यमान कर उन्हें परम शोभायुक्त आचार्य–विग्रहत्व प्रदान करते हुए गौड़ीय वैष्णवोंके हृदय-सरोवरके आशावारिको सर्वदा परिपूरण कर रहा है। ऐसे उस भक्तिरसामृतसिन्धुके परिरक्षकके रूपमें और सुसिद्धान्त-विरोध और अनर्थरूपी पङ्किल जलप्रवाह समूहके प्रतिरोधकके रूपमें श्रीरूपानुग श्रीजीवहृदयरूप तट विराजमान है।

श्रीरूप गोस्वामीपाद द्वारा उपदिष्ट श्रीचैतन्य भक्ति श्रीरूप गोस्वामीके श्रीकरकमलों द्वारा प्रकाशित है। श्रीजीव गोस्वामीपाद विरचित 'दुर्गमसङ्गमनी' टीका पंचरात्र मतके प्रतिकूल नहीं है। कुछ व्यक्ति यह सोचते हैं कि श्रीजीव गोस्वामीपादने पाञ्चरात्रिक मत का विरोध करनेके उद्देश्यसे ही शौक्र विचार की प्रधानता और स्वकीयवाद आदि स्थापन कर श्रीरूपानुगत्वको बहुत कुछ परिवर्त्तित कर दिया है। किन्तु श्रीरूपरघुनाथ गोस्वामी द्वयके अनुगत व्यक्ति उनके ऐसे निकृष्ट विचार का कदापि समर्थन नहीं करते। श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी और श्रील नरोत्तम ठाकुर आदि गौड़ीय वैष्णवगण इस घृणित विश्वास-रोगके चिकित्सक हैं। 'मनः शिक्षा', 'विलाप कुसुमांजलि' आदि श्रीरूपानुगत्वके उत्कृष्ट निर्यास स्वरूप हैं। इसलिए आप लोगों से मेरी प्रार्थना है कि श्रीव्यासासनमें बैठकर श्रीजीव गोस्वामीपादके आनुगत्यमें हमें अपने शुद्ध जीवानुगत परिचय प्राप्त हो और 'स्वरूप गोस्वामीके रघुनाथदास' गोस्वामीके आनुगत्य में श्रीव्यास-पूजा करनेकी योग्यताके लिए प्राकृत चंचलता दूर होकर अप्राकृत सेवाप्रवृत्तिका उदय हो। श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु से लाए हुए श्रीजीव घटमें 'स्वरूपके रघुदास्य' हमें कामादि षड्रिपुओंके अनित्य दास्यरूपी दस्युसे परित्राण कर भगवत्दास्य रूप अमर सलिलमें स्नात कर हमारी पिपासा की निवृत्ति करें। श्रील रघुनाथदास गोस्वामीपाद 'मनः शिक्षा' में कहते हैं—

"गुरौ गोष्ठे गोष्ठालयिषु सुजने भूसुरगणे-
स्वमन्त्रे श्रीनाम्नि व्रजनवयुवद्वन्द्वचरणे।
सदा दंभं हित्वा कुरु रतिमपूर्वामतितरा-
मये स्वान्तर्भ्रातश्चटुभिरभियाचे धृतपदः।"

अर्थात् हे भाई मन! तुम्हारे श्रीचरणोंको पकड़कर बार-बार काकु वाक्य द्वारा तुम्हारे निकट यही प्रार्थना करता हूँ कि तुम श्रीगुरुदेव (दीक्षागुरु एवं शिक्षागुरु), व्रजधाम, व्रजवासीगण, सुजन (भक्तिमान व्यक्ति), भूसुरगण (उत्तम ब्राह्मण स्वभावसम्पन्न व्यक्ति), स्वमंत्र (गुरु-प्रदत्त मंत्र) हरिनाम और व्रजयुवद्वन्द्व (श्रीश्रीराधाकृष्ण) के

चरणोंमें दांभिकता परित्यागपूर्वक शीघ्र ही अपूर्व रति का विस्तार करो।

श्रीरूप गोस्वामीपाद श्रीचैतन्य महाप्रभुके आश्रित होनेके पूर्व 'दबिर खास' नामसे परिचित थे। भक्तिके स्वरूप विज्ञानमें कुशल तदनुगत सम्प्रदायके व्यक्ति उन्हें 'दबिर खास' न जानकर श्रीमन्महाप्रभुके 'श्रीरूप' के रूपमें ही जानते हैं। श्रीरूप गोस्वामीजीने श्रीश्रीगौरसुन्दरके निकट भक्ति विषयिणी शिक्षा प्राप्त करनेका अभिनय प्रदर्शन किया था। जो कुछ उन्होंने श्रवण किया था, वही उनके कृपा स्वरूपसे तदनुगत सम्प्रदायके भक्तिरसामृतसिन्धुमें अधिकार प्रदान कर सकता है। उन्होंने जिनके निकट भक्तिसिद्धान्त प्राप्त किया था, वे ही सम्बन्ध-तत्त्व विग्रह श्रीकृष्णने श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुके रूपसे 'साकर मल्लिक' को 'सनातन' विग्रहत्वमें प्रतिष्ठित किया। इसलिए श्रीरूप गोस्वामीपादने श्रीसनातन गोस्वामीपादको 'गुरु' के रूपमें बतलाया है। इसलिए श्रीरघुनाथदास गोस्वामीपादने अपने 'श्रीविलापकुसुमांजलि' में श्रीसनातन गोस्वामीपादको श्रीकृष्ण सम्बन्ध-प्रदाता कहा है-। श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी प्रभुने उन्हें ही 'भक्ति सिद्धान्ताचार्य' कहा है। उसी भक्तिसिद्धान्तने श्रीरूप गोस्वामीपादके श्रीकरकमलों द्वारा प्रकाशित होकर भक्तिरसामृतसिन्धुके सन्धानदायिनी सरणी (मार्ग) के रूपसे श्रीरूपानुग श्रीजीवानुग सम्प्रदायके भक्तोंके सत्त्वोज्ज्वल हृदयको प्रकाश कर भक्तिरसामृतसिन्धु पान कराया है। श्रीजीव गोस्वामीपादके विचारके द्वारा जो व्यक्ति अपने-अपने प्राकृत स्वार्थको सिद्ध करनेका प्रयास करते हैं, वे लोग दुर्गम पथमें भ्रान्त होकर भक्तिरसामृतसिन्धुमें प्रवेश करनेमें असमर्थ हो पड़ते हैं। जो व्यक्ति श्रीजीव गोस्वामीपादको 'श्रीरूपानुग' कहनेमें संकोच बोध करते हैं, उनका अपनेको 'श्रीरूपानुग' कहकर परिचय देनेकी सम्भावना नहीं है और वे लोग श्रीरघुनाथदास गोस्वामीपाद द्वारा प्रदर्शित रूपानुग-भजन-प्रणाली अनुसरण करनेका अधिकार प्राप्त नहीं कर सकते। श्रीजीव गोस्वामीके अनुगत व्यक्तिके लिए श्रीरघुनाथदास गोस्वामीके आनुगत्यको छोड़कर दूसरा कोई पथ नहीं है। सम्बन्ध ज्ञानके उदय होने पर ही भक्तिकी प्रवृत्ति क्रियावती होती है। भक्तिके उत्तरोत्तर वैशिष्ट्य-वैचित्र्य-विलासादि भक्तिमानके सम्बन्धज्ञानके आधार पर ही प्रस्फुटित होते हैं।

भगवान रसमय वस्तु हैं। भगवन्माया द्वारा रचित वस्तुमें जो रस है, वह अनित्य, अज्ञान द्वारा परिपूर्ण और निरवच्छिन्न आनन्दमें बाधास्वरूप है। स्थूल-सूक्ष्म उपाधिग्रस्त अनर्थमय जीव वास्तव वस्तु श्रीकृष्णसे सम्बन्ध संस्थापन करनेमें असमर्थ होकर उनके साथ उनके मायारचित जड़शक्ति परिणति-रूप प्राकृत जगतका भेद न जानकर उसमें

अभिनिविष्ट होते हैं और उस विवर्त्तमें पतित होकर माया वैचित्र्यरहित अवस्थाको ही 'ब्रह्म' समझते हैं और उनके सहित निर्भेद होनेको ही 'अभिधेय' समझते हैं। कोई-कोई विवर्त्तमें पतित होकर जड़भोगके प्रभुके रूपसे अपनी इन्द्रियों द्वारा अपनी अनर्थमय अवस्थाका परिपोषण करते हैं। ये दोनों प्रकारके अभिक्तिपूर्ण अनुष्ठान भक्तिस्वरूपसे सम्पूर्ण रूपसे पृथक हैं। रसमयी भक्तिका परिचय नीरस या विरस-जातीय परिणाम द्वारा कदापि नहीं पाया जा सकता। जीवके स्वरूपज्ञानके अभाव में भुक्ति और मुक्ति किसी समय प्रयोजन तत्त्वके रूपमें जान पड़ते हैं और किसी समय भक्तिके स्वरूप बोधके अभावमें भक्तिको साधन जानकर भुक्ति या मुक्तिमें साध्यज्ञान होता है। शुद्धजीव भजन बलसे भुक्ति या मुक्तिको प्राप्य न जानकर उनके प्रभु होकर परमैश्वर्यमयी भक्तिकी परिचर्यामें उन्हें नियुक्त करते हैं। भक्तिके परिचायक रूपसे ही कर्म और ज्ञानका अधिष्ठान है, कर्म और ज्ञानकी दासीरूपसे कदापि शुद्धभक्तिका अधिष्ठान नहीं हो सकता। कर्मकी विरसता और ज्ञानकी नीरसता रसमयी भक्तिके प्रतिकूल हैं। भक्तिरसामृतसिन्धु ग्रन्थमें भक्तिके स्वरूप-निर्णयमें अनुकूल कृष्णानुशीलनकी बातको ही प्रधानता दी गई है। गौणरूपसे इस प्रधानताका समर्थन करनेके लिए प्रतिकूल भावसमूहोंका निषेध किया गया है। कृष्णके अनुकूल विचारमें विष्णुके विभिन्न सेवा-प्रकाश-समूह कृष्णके आंशिक वैभवका प्रकाश करते हैं। जिस प्रापञ्चिक बुद्धिवृत्तिकी चंचलताके कारण कृष्णके प्रभुत्व और विभुत्वका अपहरण कर जीव आसुरिक भावसमूहका आदर करने लगता है, वह अभक्तिका ही बोधक है। इसलिए प्रतिकूल कृष्णानुशीलन करने जाकर अनर्थमय विवर्त्तवादी जीव निर्भेद ब्रह्मानुसन्धानमें निमग्न हो जाता है। इसलिए प्रभु और भक्तरूप सेव्य-सेवक भाव रहित होनेसे जो दुर्गति होती है, वह कृष्णके प्रतिकूल अनुशीलनमें मुख्यतम है। यह विकृत वस्तु-धारणाका ही फल है। प्रपञ्चमें प्रकटित कंस जरासन्धादि दुष्प्रवृत्तिके अवतार-समूह भक्तिरहित होकर भुक्ति-मुक्तिको प्रयोजन समझते हुए प्रतिकूल कृष्णानुशीलन करते हैं। यह पहले कहे गये निर्भेदब्रह्मानुसन्धानकी तरह प्रपञ्चमें अवतरणमात्र है।

गुरु, व्रजधाम, धामवासीजन, वैष्णव, ब्राह्मण, नामकीर्त्तन और मन्त्रोच्चारण द्वारा अनुकूल रूपसे श्रीश्रीराधाकृष्णकी सेवा हो सकती है। प्रतिकूलरूपसे स्वयं सेव्य वस्तु होनेकी पिपासा जागनेसे तत्तत्वस्तुकी कृष्णसेवन भावनाके विपरीत मायिक आवरण प्रबल हो उठता है। ऊपर कहे गये अनुकूल अनुशीलन प्रदान करनेवाले सात वस्तुएँ भगवद्भक्तिके सहायक हैं। दंभ अथवा अभिमान इन वस्तुओंके वास्तव विचारको आवृत

कर देता है; फलस्वरूप मायिक दर्शनकी प्रबलताके कारण बद्धजीव कर्म - ज्ञानादिके पथमें जाकर विपथगामी हो पड़ता है।

रसोदयके पूर्वकी अवस्थाका ही नामान्तर साधन-भक्ति है अथवा वह रसका प्रागुदयभाव-मात्र है। रसोदय होनेपर भक्ति 'साधन-भक्ति' न कहलाकर 'भाव-भक्ति' कहलाती है। स्थायि-भाव रूप रति सर्वप्रथम अवस्थामें 'श्रद्धा' कहलाती है। स्थायिभावके साथ चारों सामग्री (विभाव, अनुभाव, सात्त्विक भाव, और संचारी भाव) के संमिलनसे रसोदय होता है। सामग्रीरहित असंमिलित रतिकी पूर्व अवस्था ही श्रद्धा या भक्तिमें सुदृढ़ विश्वास है।

जो व्यक्ति जड़ साहित्यमें अप्राकृत विवर्त्त दर्शन करनेका अथवा प्रयास करते हैं वे जड़ीय अलङ्कारके आवरणमें फँस जाते हैं और 'अज्ञ-भक्त' होकर भी अपनेको वास्तविक भक्त समझते हैं। भक्तिरसामृतसिन्धुकी आलोचना न होनेके कारण तटस्थ जीवगण अपने रूपानुगत्वका परिचय भूलकर श्रीरूपानुग श्रील रघुनाथदास गोस्वामीके आनुगत्यसे नित्यकाल के लिए वञ्चित हो जाते हैं और श्रीरूपानुग वैष्णवोंके चरणोंमें अपराध कर बैठते हैं। ऐसे बद्धजीव आत्मवृत्तिरूपा भक्तिका सन्धान न पाकर कभी श्रीजीव गोस्वामीपादका विरोध करते हैं तो कभी श्रील रघुनाथदास गोस्वामी-पाद का। वैष्णवोंमें पक्षपात दोष देखने जाकर वे विवर्त्तमें फँस जाते हैं। यह भ्रान्ति ही उन्हें श्रीरूपानुग-धर्म पालन करनेमें प्रबल बाधा प्रदान करती है। कभी कृष्णेतर अभिलाषा, तो कभी स्वभोग तात्पर्ययुक्त कर्मावरण, स्व-त्याग तात्पर्यपूर्ण प्रच्छन्न बौद्धवाद या माया-वाद आदि आकर भक्तिके दृढ़ सन्धानमें बाधा प्रदान करते हैं।

भक्तिरस तरल है, वह प्रापञ्चिक रसकी तरह शुष्क नहीं है। नित्य रस-समुद्रका विनाश नहीं है और वह सङ्कीर्ण जलाशयकी तरह नहीं है। भजनीय वस्तु सीमाबद्ध मायिक जगतके द्रव्यविशेष नहीं हैं; इसलिए उनका सेवामृतसमुद्र असीम वैकुण्ठ रस-समुद्र है। यदि भवरोग पीड़ित भोक्ताभिमानी जीव अनर्थ-मुक्त होकर भक्तिरसामृतसिन्धुमें प्रवेश कर सके, तब ही सर्वार्थ सिद्धि सहज रूपसे प्राप्त हो सकती है। कर्मज्ञानादिके आवरण या अन्या-भिलाषरूप स्वेच्छाचार उस समय भक्तिपथके कन्टक रूपसे उपस्थित नहीं होते। पूर्व दुष्कृति के कारण जिन लोगोंकी भक्तिरसामृतसिन्धु में प्रवेश करनेकी रुचि नहीं होती, वे लोग श्रीरूपानुग वैष्णवोंकी दयाकी उपलब्धि करनेमें सर्वथा असमर्थ हैं। श्रीदामोदर स्वरूप गोस्वामीके सेव्य दयानिधि श्रीश्रीगौरसुन्दरने भक्तभाव अङ्गीकार कर उस भक्तिसमुद्रकी शोभा प्रदर्शन करानेके लिए ही सेनापति श्रीरूप गोस्वामीको प्रतिकूल अनुशीलनपरायण व्यक्तियोंके कल्याणके लिए श्रीव्यासासन पर

उपवेशन कराया था। श्रीरूपानुग वैष्णवगण ही श्रीमद्भागवतकी पुनरावृत्ति करनेमें समर्थ हैं। अभक्त जनोंकी माया-मरीचिका द्वारा कदापि भक्तिरसामृतसिन्धुके पथका सन्धान पाया नहीं जा सकता। इसलिए विद्यावधू-जीवन श्रीकृष्ण-संकीर्त्तनमें रूपानुगत्व ही एकमात्र पथ है।

'पराविद्या' शब्द द्वारा भक्तिका ही संकेत किया गया है। उसी भक्तिलाभकी इच्छासे मैं श्रीव्यासादि गुरुजनोंके चरणोंमें उपस्थित हुआ हूँ। वे मेरे अभक्तिपूर्ण मरु-हृदयमें कृपावारि का सिंचन कर मुझे उनके निजदासके रूपमें जानकर सेवामें अधिकार प्रदान करें। श्रीश्री-चैतन्य महाप्रभुजीने स्वयं अपने श्रीमुखसे महाभागवतका लक्षण बतलाया है—

"जाँहारे देखिले मुखे आइसे कृष्णनाम।
ताँहाके जानि ओ तुमि वैष्णव-प्रधान॥"

आप लोग सभी महाभागवत होनेके कारण मुझे आप लोगोंने श्रीव्यासार्चन करने का अधिकार प्रदान किया है। इस अधिकार प्रदान करनेके विनिमयमें मैं आप लोग जैसे महाभागवतोंकी सेवामें अनन्तकाल तक नियुक्त रहूँगा। इसके लिए मैं किसी प्रकारके वेतनका प्रार्थी नहीं हूँ।

अन्तमें मेरा यही निवेदन है कि आप लोगोंके महत्वका परिचय देनेवाले जो सभी वाक्य मेरे द्वारा कहे गये हैं, प्रापंचिक विचार से उनमें मेरी कोई योग्यता नहीं है। इन सभी वाक्योंको श्रीगुरुदास सम्बन्धसे मेरे पूर्वगुरुजनोंका प्राप्य होनेके कारण इन्हें ग्रहण करते हुए उन लोगोंके श्रीचरणकमलोंमें ही समर्पण कर रहा हूँ। जागतिक ज्ञानके आधार पर इस वाणी-समूहको ग्रहण करनेका सामर्थ्य मुझमें नहीं है। श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुके आदेशसे "तृणा-दपि सुनीच" मन्त्रमें दीक्षित मैं ऐसे गुरुभार वहन करनेमें अनिपुण हूँ। अतएव इन्हें श्रीगुरुदेवके उद्देश्यसे समर्पण करनेके व्यतीत मेरे लिये और कोई मार्ग नहीं है।

भवता महता समर्पितं न हि वर्त्तुं प्रभवामि वैभवम्।
उचितं गुरवेऽहं अद्य तं सुवराकः प्रणयात् समर्पये॥

—जगद्गुरु ॐ विष्णुपाद श्रील सरस्वती ठाकुर

परमाराध्यतम श्रीश्रीगुरुदेवके आविर्भावोत्सव

पर विरहपूर्ण हृदयोच्छ्वास

हा शरण्य गुरुवर केशव !

आपका विरह असह्य है । मानस वेदना सागरमें निमग्न हो रहा है । जगत शून्य-सा तेजहीन-सा दीख रहा है । सूर्यचन्द्र तारागण मलिन, हतप्रभसे परिलक्षित होते हैं । वायुकी गति अवरुद्ध-सी प्रतीत होती है । मानव ही नहीं, पशु-पक्षी-कीट-पतङ्ग आदि सभी प्राण-हीन-से हो गये हैं । अधिक क्या, जिस ओर भी दृष्टिका प्रसार करता हूँ, पृथ्वीके चर-अचर व्यथित हैं, मौन हैं ।

हा करुणाकर सदय हृदय प्रभुवर !

इन नयनोंको किस अपराधसे मनोरम मुखारविन्दके दर्शनोंसे वञ्चित कर दिया ? श्रवणोंसे आपकी अमृतमयी अज्ञान विनाशिनी भक्तिरसदायिनी वाणीके श्रवणका अधिकार क्यों छीन लिया ? मस्तकको पापतापहारी सुकोमल चरणरजमें लोटनेसे क्यों विमुक्त कर दिया ? आपका अनुगमन करनेमें तत्पर चरणोंकी गति क्यों छीन ली ? इन करोंको आपकी सेवा - साधनासे क्यों निर्मुक्त कर दिया ?

हे जगत्वंद्य सरस नीरद !

मानव समाज आज कलि दावानलकी भयंकरी ज्वालामें जला जा रहा है । इसे क्या भक्तिकी अजस्र वर्षासे आप्लावित नहीं करेंगे? क्या परिवृद्धमान अग्निको शान्त नहीं करेंगे ?

हा न्याय स्वरूप !

क्या हमारे माया-मोह कामादि विकार समृद्ध होते रहेंगे ? क्यों इनके मुख मर्दनसे आप विमुख होकर चल दिये हैं ? देव ! अपराधी तो दण्डसे ही अधीन होते हैं ।

वह पावन दिन था । हमारे भाग्यसूर्यका उदय हुआ था । आप पथभ्रष्ट जनोंको सुगम सरल मार्गकी ओर प्रवृत्त करने जयपुर पधारे थे । परम समाराध्य श्रीश्रीराधाकृष्णजीके मन्दिरमें युगल स्वरूपके सान्निध्यमें वैष्णव जनता पर कृपा भरित होकर श्रीकृष्णभक्तिकी मन्दाकिनी प्रवाहित कर मुझ जैसे जनोंको सांसारिक तापसे निर्मुक्त किया था । वह अपूर्व क्षण युगों तक क्या विस्मृत हो सकता है ?

हा युगावतार !

महाप्रभु श्रीकृष्ण चैतन्यदेवके महोपदेशकी अमर धारामें कौन हमें अवगाहन कराकर निर्मल करेगा ?

हा जीवनाधार !

अब भौतिक युगकी झंझा से हमारी कौन जीवन रक्षा करेगा ? कौन वात्सल्यमयी भावनासे निकट ले जाकर हमें भक्ति रसरूपी अमल दुग्ध पान करायेगा ?

हा कर्णधार !

विषय भोगोंसे भरी जीवन नैयाको भवाम्बुधिसे पारकर व्रजवल्लभ श्रीकृष्णके चरणों के निकट कौन पहुँचायेगा ?

हा जगदुद्धारक !

ऐसे छटपटाते विलखते असहाय हम जैसे निराश्रय प्राणियोंको छोड़कर परम प्रभुकी लीलामें प्रवेश क्यों अधिक आपको रुचिकर हुआ है ?

—विकल हृदय बागरोदो श्रीकृष्णचन्द्र शास्त्री साहित्यरत्न, काव्यतीर्थ

—o—

व्यासपूजा क्यों की जाती है ?

[बहुत वर्षों पहले नित्यलीलाप्रविष्ट परमाराध्यतम १०८ श्रीश्रील गुरु महाराजने श्रीश्रीव्यासपूजाके अवसर पर वक्तृता प्रदान की थी। उसी को यहाँ उद्धृत किया जा रहा है।]

प्रत्येक वर्ष ही मैं आप लोगोंको श्रीश्रीव्यासपूजाके लिए आह्वान किया करता हूँ। श्रीव्यासपूजा क्या है, हमें सबसे पहले यह जानना आवश्यक है। श्रीव्यासपूजा कहनेसे केवलमात्र श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यासकी ही पूजा नहीं है, बल्कि तदनुगत गुरुवर्गकी भी पूजा जाननी चाहिए। प्रायः ४५० वर्ष पहले श्रीमन्महाप्रभुजीने श्रीनित्यानन्द प्रभुके द्वारा श्रीवास अङ्गनमें यह श्रीव्यासपूजा प्रचलन की थी। उसके पश्चात् जगद्गुरु नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुरने सारे भारतवर्षमें श्रीगौड़ीय वैष्णव समाजमें विशुद्ध श्रीव्यासपूजाका पुनः प्रवर्त्तन किया। शांकर सम्प्रदायमें भी व्यासपूजाका प्रचलन देखा जाता है। किन्तु वह व्यासपूजाके बदले व्यासपूजाका स्वाँग मात्र है। पूजनीय वस्तुकी ही हम लोग पूजा किया करते हैं और निर्विचारपूर्वक निष्कपट रूपसे उन्हें भ्रम-प्रमादादि दोषशून्य जानकर उनकी शिक्षा एवं उपदेशका पालन करते हैं। जहाँ वे भ्रम-प्रमादादि दोषयुक्त हैं—ऐसा विचार या सन्देह उपस्थित हो, वहाँ पूज्य बुद्धि कहाँ है ? आचार्य शंकरको लक्ष्य कर श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी ने कहा है—

"व्यास भ्रान्त बलि सेइ सूत्रे दोष दिया ।
विवर्तवाद स्थापियाछे कल्पना करिया ॥"
(चै. च. म. ६।१७२)

मैं व्यासको मानूँगा, उनकी पूजा करूँगा, तथापि उनके विचार को स्वीकार नहीं करूँगा—यह बात असम्भव है । श्रीगुरुदेव और श्रीव्यासदेवमें मर्त्यबुद्धि और सन्देह करनेसे जीव अधोगतिको प्राप्त करता है और जीवको नरक गमन करना पड़ता है । इसलिये शास्त्रोंमें कहा गया है—"न मर्त्यबुद्धया असूयेत सर्वदेवमयो गुरु", "संशयात्मा विनश्यति" आदि । शङ्करचार्यजीने स्वयं व्यासदेवको भ्रान्त कहा है । इसलिये जो व्यक्ति व्यासदेवजीके विचारको भ्रान्त समझते हैं, उनकी व्यासपूजा लोकवञ्चना विशेषमात्र है । यह 'मुखमें राम, बगलमें छुरी' की तरह व्यवहार मात्र है । इसलिए हमें सबसे पहले श्रीव्यासदेव के अनुगत होना पड़ेगा । उनकी वाणी और शिक्षाको ग्रहण कर जगतमें उनके प्रचारके लिये चेष्टा करनी पड़ेगी । विशुद्ध रूपसे श्रीव्यासपूजा प्रचलन करनेके लिए हमें सब प्रकारसे तैयार होना पड़ेगा । आप लोग सभी श्रीव्यासदेवजीके अनुगत होकर व्यासपूजामें आत्मनियोग करें । इसमें किसी प्रकारका कष्ट न होगा और संसारकी जितनी भी अमङ्गल राशि हैं, सब नष्ट हो जायगी । कोई-कोई कहते हैं कि धर्म-नीतिके साथ समाज-नीति, राष्ट्र-नीति और अर्थ-नीतिका कोई सम्बन्ध नहीं है । इसलिये धर्मपालन करनेसे जागतिक अभाव-कष्ट आदि मिट नहीं सकते । इस विषय में हमारा कहना है कि आप लोग श्रीव्यासदेव द्वारा लिखित शास्त्रानुसार धर्म पालन करते हुए धर्मपथमें चलें; आप लोग देखेंगे कि सभी अभाव-कमी इत्यादि सहज ही दूर हो जायेंगे । प्रकृत व्यासानुगत्यके बिना दूसरे प्रकारके मनखुशी धर्मपालन करनेसे किसी प्रकारसे भी मंगल न होगा । धर्म पालन करनेसे समाज-नीति, राष्ट्र-नीति और अर्थ-नीतिकी कोई भी कमी न होगी । बल्कि ये सभी आप लोगोंके अनुकूल बन जायेंगे । और किसी-किसीका कहना है कि प्राचीन शास्त्र-पोथी इत्यादि अब नहीं चलेंगे । धर्म, कर्म, शास्त्र-ग्रन्थ इत्यादि सभी कुछको युगोपयोगी करना पड़ेगा । किन्तु वे लोग यह बात भूल जाते हैं कि भगवानके शक्त्यावेशावतार त्रिकालदर्शी शास्त्रकार श्रीव्यासदेवजी द्वारा रचित शास्त्र ग्रन्थोंमें सर्व-देश, सर्वकाल और सब प्रकारकी बातोंका ही निर्देश दिया गया है । वे समाज-नीति, राज-नीति, अर्थनीति आदि सभी विषयोंमें पारङ्गत थे । उनके रचित असंख्य शास्त्र ग्रन्थोंमें उन्होंने इन विषयोंकी प्रचुर रूपसे आलोचना की है और इस सम्बन्धमें उपदेश भी दिया है । वर्त्तमान समयमें अंग्रेजी या भारतीय कानून ग्रन्थोंमें फौजदारी एवं दिवानीके कानून आदि सभी कुछ प्राचीन संहिता ग्रन्थोंसे संग्रह किये गये हैं । इसके अलावा छन्द, व्याकरण, कल्प, ज्योतिष, विज्ञान, आयुर्वेद आदि हमारे

सनातन शास्त्रके दान हैं। आज प्रतिदिन जिस ज्वार-भाटा निरूपण, सूर्यचन्द्र-ग्रहण इत्यादि निरूपण, भिन्न-भिन्न लतागुल्म द्वारा औषधादि तैयार कर प्राणरक्षण आदि कार्य किये जाते हैं, यह सभी आर्य ऋषियोंका ही दान है। पाश्चात्य देशोंमें वर्त्तमान समयमें विज्ञान और तत्सम्बन्धी विषयोंमें जो उन्नति देखी जाती है, वह व्यासदेवजीके पुरातन ग्रन्थोंका भाषान्तर मात्र है। इसमें वे लोग गौरव बोध करते हैं। पुरानी बातको नये रूपसे कहनेसे जो कृतित्व मिलता है, वही उन लोगोंको प्राप्त है। हमारे सनातन धर्मशास्त्रमें किसी वस्तुका ही अभाव नहीं है। हमारे शास्त्रकार महर्षि, राजर्षि आदियोंने विशेष कुशलताके साथ राज्यादि भी पालन किया है। उन्हें किसी विद्याका भी अभाव नहीं था। वर्त्तमान समय में पाश्चात्य शिक्षित नास्तिक पण्डिताभिमानी स्वदेश-श्रीकातर व्यक्ति लोग ही पाश्चात्य शिक्षाका बहुमानन करते हैं। यह उनकी पराधीनताका द्योतकमात्र है। उन लोगोंका कहना है—"धर्म धर्म करनेसे नहीं चलेगा, धर्मके द्वारा हमारा कोई भी अभाव नहीं मिटेगा; बीसवीं शताब्दीमें धर्मके लिये स्थान नहीं है। वर्त्तमानमें भारतको मुक्त करनेके लिये उपयुक्त कर्मवीर बनाना पड़ेगा" आदि आदि। राष्ट्रका नैतिक पतन होनेसे दुर्नैतिक धर्महीन राष्ट्र कदापि चल नहीं सकता और धर्महीन राष्ट्रमें सुख शान्तिकी संभावना नहीं है। यह बात उन लोगोंके दिमागमें कदापि प्रवेश नहीं करती। धर्म ही भारतका अस्तित्व है, धर्म ही भारतका गौरव है, धर्म ही भारत का शान्तिदाता है और वे सर्वोत्तम सनातन धर्मशास्त्र प्रणेता श्रीव्यासदेवजी ही हमारे सर्वकाल, सर्वविषयके पथ-प्रदर्शक हैं—इस बातको जिस दिन भारतवासी पद पदमें उपलब्धि करेंगे, उसी दिनसे वे अज्ञानकी शृंखलासे मुक्त हो सकेंगे और वे पराशान्तिको पा सकेंगे। धर्म ही भारतका वैशिष्ट्य है, यह अंग्रेज धर्मावलम्बी Reverend Bishop स्वीकार करनेके लिए बाध्य हुए हैं—"India guided by god can lead the world back to sanity" अर्थात् भारत भगवान-द्वारा पथ प्रदर्शन पाकर संसारको पवित्रताकी ओर ले जा सकता है। इसीलिये आप सभी लोगोंको श्रीव्यासानुगत्यमें सनातन धर्मका अनुसरण करनेके लिए अनुरोध और आह्वान कर रहा हूँ। केवल आप लोगोंको ही नहीं, बल्कि सारे विश्ववासियोंको यह सनातन धर्म ग्रहण कर नित्या शान्ति प्राप्त करनेके लिए मेरा यह निवेदन है।

श्रीव्यासदेव ही इस सनातन धर्म पद्धतिके मूल नियामक हैं। उन्होंने सारे पृथ्वीके लिए लाखों श्लोकोंकी रचना की है। मेरे गुरुदेव जगद्गुरु श्रील प्रभुपादजी, जिनके जन्मदिवस पर हम लोग यहाँ एकत्रित हुए हैं, उन्होंने यह पद्धति संग्रह की थी। इसके पश्चात् श्रील भक्ति-विनोद ठाकुरजीने इसका संशोधन किया है। वर्त्तमान समयमें इसके विस्तृत प्रचारकी

विशेष आवश्यकता है। जिस किसी कारणसे भी क्यों न हो, यह उनके प्रकटकालमें प्रचलित और अनुष्ठित नहीं हुई। सर्वप्रथम दो वर्ष पूर्व श्रीउद्धारण गौड़ीय मठमें ही इस पद्धतिके अनुसार सबसे पहले पूजापंचक और तत्त्व-पंचकके पूजाका प्रचलन हुआ है। इस व्यास-पूजा-पद्धतिको टीकाटिप्पणी एवं अनुवादके साथ सर्वसाधारणके बोधगम्य कर प्रकाशन करनेकी हमारी इच्छा है। किन्तु आज तक इसे कार्यमें परिणत नहीं किया जा सका।

श्रीव्यासपूजा पद्धतिमें अधोक्षज-सेवाका सुन्दर वैशिष्ट्य संरक्षित हुआ है। मायावादी की निष्ठामें और अधोक्षज सेवकोंकी ऐकान्तिक निष्ठामें आकाश-पातालका अन्तर है। माया-वादीके सङ्ग और कवल से परित्याग पाकर अधोक्षज सेवा प्राप्त करनेके लिए श्रील प्रभु-पादजीने श्रीसनातन व्यासपूजाके अनुष्ठानका प्रचलन किया था। यह उनके आचार और प्रचारमें प्रकाशित हुआ है। प्रत्यक्ष, परोक्ष और अपरोक्ष ज्ञान तक मनोधर्मका राज्य है। अधोक्षज ज्ञानसे आत्मधर्मका आरम्भ होता है। अधोक्षज सिद्धान्तमें जड़ जगतका भाव और निर्विशेष भाव निरस्त होकर परव्योम राज्यकी बात प्रारम्भ हुई है। यह अधोक्षज वस्तु पंचतत्त्वमें प्रकाशित हुई है—१ अर्चा, २. अन्तर्यामी, ३. वैभव, ४. व्यूह और ५. पर। ये पाँचों उसीके क्रम-विकाश हैं। पंचोपासकोंकी धारणा है कि निर्विशेष ब्रह्मके बहुतसे रूपोंकी कल्पना की जा सकती है। कनिष्ठाधिकारी श्रीगुरुपादपद्मसे सौभाग्य-वशतः यह श्रवण करते हैं कि ब्रह्मके बहुतसे रूप नहीं हो सकते। एकमात्र अधोक्षज कृष्ण के ही बहुतसे अधोक्षज नित्य और स्वरूपसिद्ध रूप वर्त्तमान हैं। अधोक्षज वस्तु या विष्णुके बहुतसे रूप रहने पर भी अधोक्षज कृष्णका कृष्णत्व ठीक ही रहता है। निर्विशेष ब्रह्मके बहुतसे रूप कल्पित होने पर ही पंचोपासना और मायावाद आकर उपस्थित हो जाते हैं। अधोक्षज पूजापंचक इस पंचोपासना और मायावादसे जीवकी रक्षा करते हैं।

पूजापंचक कहनेसे स्मार्त्तोंके पंचोपासना को नहीं समझना चाहिये। पंचोपासना कर्म-मार्गके अन्तर्गत है। ज्ञानियोंने पंचोपासना और पूजापंचक स्वीकार किया है। किन्तु भगवद्भक्त लोग पूजापंचकको ही एकमात्र व्यासानुगत्यके रूपमें आदर करते हैं। उसमें कृष्ण-पंचकका उल्लेख होनेपर भी पाँच कृष्ण को नहीं समझकर कृष्ण-तत्त्व-पंचकको ही समझना चाहिये। व्यासपूजा पद्धतिके कृष्ण-पंचकमें स्वयं श्रीकृष्ण, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध—इन पाँचोंका उल्लेख है। ये सभी तत्त्वतः कृष्ण ही हैं। तत्त्वपंचक-की पूजा श्रीमन्महाप्रभुजीके अनुगत व्यक्ति पंचतत्त्वकी पूजा-पद्धतिकी तरह करते हैं। व्यासपूजा पद्धतिमें कृष्णपंचककी पूजाका यही वैशिष्ट्य है कि सेव्यतत्त्वकी पूजाके बिना केवल सेवक तत्त्वकी पूजा शास्त्रविहित नहीं है; उसी प्रकार सेवक तत्त्वको छोड़कर केवल

सेव्य तत्त्वकी पूजा भी शास्त्रविहित नहीं है। श्रीव्यासदेवके उपास्य या सेव्य कृष्णपंचक है। इसे शंकर सम्प्रदायके लोगोंने भी मान लिया है। आचार्य शङ्करजी पंचोपासनाके प्रचारक होने पर भी उन्होंने व्यासपूजाके सम्बन्धमें कृष्णको ही श्रीव्यासदेवजीका उपास्य कहकर ग्रहण किया है। इससे यह जाना जाता है कि श्रीव्यासदेवजीने श्रीकृष्णको ही स्वयं भगवान और मूलपुरुषके रूपमें प्रचार किया है। इसका प्रमाण है—"एते चांशकला: पुंस: कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्।"

वर्त्तमान समय में हिन्दी ही राष्ट्रभाषा है। संस्कृत राष्ट्रभाषा होनेसे राजनैतिक, धार्मिक या सामाजिक व्यवस्थामें किसी प्रकारकी असुविधा न होती। सभी व्यक्ति बाध्य होकर श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यास प्रणीत प्राचीन संस्कृत शास्त्रादि आलोचना कर उनकी भ्रान्त धारणाओंका संशोधन कर सकते थे और साथ ही साथ बहुतसे तथ्य और विषयों पर अभिज्ञता लाभ कर सकते थे। संस्कृत भाषा की भली प्रकारसे आलोचना न करनेके कारण हम लोगोंने उसे Dead language समझ लिया है। इसका फल भी हम लोग प्रचुर रूपसे पा रहे हैं। पाश्चात्य देशवासी संस्कृत-शिक्षामें पारदर्शिता प्राप्त कर जहाजके द्वारा संस्कृतके सभी ग्रन्थ उनके देशोंमें ले जाकर आज हम लोगोंसे वे लोग बहुतसे विषयोंमें उन्नत हुए हैं। भारतवासी अपनी निजस्व सम्पत्तिसे दूर रहकर उस सुयोगसे वंचित हुए हैं। हम लोग इच्छा करने पर अभी भी हमारे प्राचीन इतिहास, सभ्यता और गौरवका पुनरुत्थान कर सकते है।

मेरी यह आप लोगोंसे प्रार्थना है कि श्रीव्यासदेवजीके आनुगत्यमें सनातन धर्मानुसरण कर धर्मका पालन करें। मेरा यह विश्वास है कि सारे बंगाल और सारे भारतवर्षके प्रत्येक पल्ली तथा कुटीमें जिस दिन श्रीव्यासपूजाका प्रचलन और समादर होगा, उसी दिनसे भारतवासी अपने लुप्त—गौरवमें पुन: प्रतिष्ठित होनेमें समर्थ होंगे और परा शान्ति प्राप्त कर सकेंगे।

श्रीव्यासपूजाके सम्बन्धमें श्रील प्रभुपादजी की वाणीका उल्लेख कर मैं अपना वक्तव्य पूर्ण करता हूँ—"श्रीव्यासपूजा चारों आश्रमोंका ही कर्त्तव्य अनुष्ठान है। तब गृहत्यागी व्यक्ति इसे विशेष यत्नके साथ किया करते हैं। श्रीव्यासदेवजीके अनुगत सम्प्रदायके व्यक्ति व्यासानुग सम्प्रदायके नामसे प्रसिद्ध हैं। वे प्रत्येक वर्ष अपने जन्म दिवसपर पूर्व गुरुवर्ग की पूजा किया करते हैं। श्रीगौड़ीय मठके सेवक लोग प्रति वर्ष माघी कृष्णा पंचमीकी तिथिपर गौरवके साथ श्रीव्यासपूजाका अनुष्ठान करते हैं। श्रीव्यासपूजाकी पद्धति विभिन्न शाखाओं भिन्न-भिन्न है। चारों आश्रमोंमें अवस्थित संस्कारसम्पन्न ब्राह्मण लोग सभी श्रीव्यासदेवजीके आश्रित होनेके कारण प्रतिदिन स्वधर्मानुष्ठानमें श्रीव्यासदेवजीकी थोड़ी बहुत पूजा किया करते हैं। किन्तु वार्षिक अनुष्ठानके विचारमें यह वर्षकालव्यापी अपनी-अपनी गुरुपूजाका स्मारक-दिवस है।"

त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद् भक्तिसाधक निष्किञ्चन महाराजका नित्यलीलामें प्रवेश

वर्त्तमान समयमें श्रीगौड़ीय सम्प्रदायके लिए दुर्दिन उपस्थित हुए हैं । क्योंकि जगद्-गुरु ॐ विष्णुपाद श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुरके अनुग्रहीत उनके एकान्त अनुगत निजजन सभी क्रमशः गौड़ीय गगनको अन्धकार कर नित्यधाममें गमन कर रहे हैं। अभी-अभी श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके सदस्य गण परमाराध्यतम ॐविष्णुपाद १०८ श्रीश्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके विरह सागरसे उत्तीर्ण भी नहीं हो पाये कि उन्हें एक और महापुरुषके उत्ताल विरह तरङ्गने पुनः उसी सागरमें डूबो दिया । यह महापुरुष हैं परम पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद्भक्ति-साधक निष्किञ्चन महाराज। गत १२ नारायण, १ पौष, १६ दिसम्बर सोमवारको श्रीहरिवा-सर व्रतका पालन करते हुए जगद्गुरु ॐविष्णुपाद १०८ श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुरके स्थापित श्रीधाम मायापुर के श्रीचैतन्य मठमें उनके भजन कुटीरके समीप ही अभिन्न श्रीराधाकुण्ड तटमें अपने भजन कक्षमें शामके ४-३० बजे श्रीहरिनाम महामंत्र का कीर्त्तन करते हुए यह महापुरुष नित्यलीला में प्रवेश कर गये ।

तिरोभाव-लीलाके समय श्रील महाराजका वयःक्रम ८५ वर्ष था। उनकी गुणावलीका स्मरण आने पर उनकी विरह व्यथाकी अग्नि और भी प्रबल हो उठती है । यह विरह अत्यन्त निदारुण होने पर भी कृष्णेच्छाको देखते हुए सहन करनेके लिए हम लोग बाध्य हैं । उनका निदारुण निर्माण-संवाद अन्यान्य मठोंमें पहुँचने पर साथ ही साथ असंख्य सज्जन-गण और वैष्णववृन्द क्रमशः उनके भजन-कुटीरमें उपस्थित हुए । श्रीधाम वृन्दावनस्थ परम पूज्यपाद परिव्राजकाचार्य त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद् भक्तिहृदय वन महाराज और 'गौड़ीय'-सम्पादक परम पूज्यपाद त्रिदण्डि-स्वामी श्रीश्रीमद् भक्तिकुसुम श्रमण महाराजके निर्देशानुसार श्रील महाराजकी श्रीसमाधि श्रीश्रीवास-अङ्गनमें देनेकी व्यवस्थाकी गई। उनका श्रीअङ्ग विभिन्न पुष्प-चन्दन-माल्यद्वारा सुसज्जित किया गया और गलेमें श्रीश्रील प्रभुपादजी और श्रीश्रीराधाविनोदबिहारीजी की प्रसादी माला पहनाई गई और संकीर्त्तन शोभायात्राके सहित उनका अप्राकृत कलेवर श्रीवास अङ्गनमें लाया गया । परम पूज्यपाद श्रील कृष्णदास बाबाजी महाराजके मूल-

गायकत्वमें हृदयस्पर्शी करुण-स्वरमें विविध विरहसूचक महाजन पदावली और महामन्त्रका कीर्त्तन हुआ। गंगाजीके सुपावन जलसे स्नान करानेके पश्चात् 'संस्कार-दीपिका' के विधानानुसार उनका श्रीकलेवर पुष्पभूषित आसन पर विराजमान करा गया और कीर्त्तनके साथ समाधि-प्रदान क्रिया सम्पन्न की गई। उस समय प्रपूज्यपाद श्रीमद्भक्तिकुसुम श्रमण महाराजने श्रीचैतन्य चरितामृतसे नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकुरकी निर्याण-लीलाका पाठ किया।

त्रिदण्डि संन्यासी होनेके पूर्व श्रील महाराज श्रीहरिपद विद्यारत्नके नामसे परिचित थे। उन्होंने एम. ए. बी. एल. डिग्री पास कर कुछ दिन वकालती की थी और उसके पश्चात् उच्च अंग्रेजी विद्यालयके प्रधान शिक्षकरूपसे प्रायः ४० वर्ष काल तक शिक्षादानमें नियुक्त रहे। उनकी न्याय-निष्ठा, अव्यर्थकालत्व, कर्त्तव्य-परायणता आदि गुण अतुलनीय और आदर्श-स्थानीय थे। भगवान्‌की सेवाके लिए उन्होंने अपना जीवन काय-मनोवाक्यसे समर्पण कर दिया था। वे कदापि सेवाके नामसे भोगके प्रयासी न थे। उनका कहना था कि सेवाहीन जीवनमें महाप्रभुके अमूल्य अर्थका अपव्यय क्यों किया जाय? महाप्रभुकी सेवाके लिए स्वच्छन्दता ग्रहण की जा सकती है, किन्तु सेवाके नामसे भोगी बनकर बैठे रहना वैष्णव जगतका आदर्श नहीं है।

इनकी ऐकान्तिक चेष्टासे सन् १९२२ में अगस्त महीनेमें सर्वप्रथम 'साप्ताहिक गौड़ीय' प्रकाशित हुआ। उसके सम्पादनमें इनका प्रमुख हाथ था। 'श्रीमद्भागवत' प्रकाशन कार्यमें इनकी विशेष सेवा-चेष्टाद्वारा सारस्वत-गौड़ीय सम्प्रदायसे सर्वप्रथम श्रीमद्भागवत प्रकाशित हुआ। वे संस्कृत और अंग्रेजी भाषा के अगाध विज्ञान थे। उनके अंग्रेजी भाषामें लिखित 'Path to God Realisation' और संस्कृत भाषाके तत्त्वसन्दर्भ और सर्व-सम्वादिनीयुक्त भगवत्सन्दर्भके बङ्गानुवाद-टिप्पणी आदिमें उनकी विद्याकी सार्थकता झलकती है।

जगद्गुरु श्रील प्रभुपादजीके समय वे श्रीविश्ववैष्णव राजसभाके सम्पादकत्रयमेंसे एक थे। श्रीधाम मायापुरस्थ जगद्गुरु श्रील भक्तिविनोद इन्स्टीट्यूटके सम्पादक रूपसे कुछ दिन नियुक्त थे। श्रीधाम मायापुरस्थ श्रीअद्वैत भवनके प्रकाशनमें इनका विशेष हाथ था। उनके जीवनका सबसे महान वैशिष्ट्य यही है कि उन्होंने आखिरी श्वांस तक परा वाणीकी सेवा की। जगद्गुरु श्रीलप्रभुपादजीने कहा था—"त्रिदण्डि संन्यासी लोग श्रीमन्महाप्रभुजीके जीवन-मृदङ्ग हैं और मुद्रणालय भगवद्-राज्य के वृहत्-मृदङ्ग हैं।" वे ऐसे जीवन-मृदङ्ग होकर भी अपने अमूल्य ग्रन्थोंके सम्पादन कार्य द्वारा वृहत्-मृदङ्गका स्थायित्व उज्ज्वलरूपसे संरक्षण करते हुए वैकुण्ठ-वाणीको जीवोंके द्वार-द्वार पर पहुँचा गये हैं। वे एक ही साथ

विद्वत्ता, बुद्धिमत्ता, निरभिमानता, न्यायपरायणता, संगीत-दक्षता आदि सर्वगुणों द्वारा मण्डित थे। उनका जीवन स्वच्छ दर्पण जैसे था। सेवाभिलाषी जीव उनके सेवादर्श-जीवन को देखकर अनायास ही परमार्थमें प्रवेश कर सकते हैं। श्रील महाराजके स्वधाम-गमनसे श्रीगौड़ीय सारस्वत वैष्णवोंको एक अपूरणीय क्षति हुई है। अन्तमें हमारी श्रीहरिगुरु वैष्णवोंके श्रीचरणकमलोंमें यही सकातर प्रार्थना है कि हम लोग भी श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुके आचरित और प्रचारित 'नाम-प्रेम धर्म' का अपने जीवनमें आचरण करते हुए जगत्वासी जीवोंके द्वार-द्वार पर पहुँचाकर उन्हें भी इस पथमें अग्रसर करा सकें—ऐसी शक्ति प्राप्त कर सकें।

—जनैक विरही

प्रचार-प्रसङ्ग

जगद्गुरु श्रीलप्रभुपादजीका तिरोभाव महोत्सव

गत ५ नारायण, २३ अग्रहायण, ९ दिसम्बर सोमवारके दिन विश्वव्यापी श्रीगौड़ीय मठके प्रतिष्ठाता और श्रीरूपानुग गौड़ीय सम्प्रदायके आचार्यभास्कर जगद्गुरु ॐविष्णुपाद १०८ श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुरका इकतीसवाँ तिरोभाव महोत्सव समितिके मूल मठ और शाखाओंमें बड़े समारोहके साथ सुसम्पन्न हुआ है।

समितिके मूल आगर मठ श्रीदेवानन्द गौड़ीयमें यह उत्सव विशेष उत्साहके साथ मनाया गया है। प्रातःकाल विविध विरहसूचक महाजन पदावलियोंका कीर्त्तन और श्रीश्रील प्रभुपादजीकी विभिन्न उपदेशावलीकी आलोचना की गई। मध्याह्नमें भोगराग-आरति आदि सम्पन्न होने पर निमंत्रित और अनिमंत्रित और सभी व्यक्तियोंको महाप्रसाद वितरण किया गया।

उस दिन शामको एक विराट् सभाका आयोजन किया गया। समितिके वर्त्तमान आचार्य पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्ति वेदान्त वामन महाराजने सभापतिका आसन अलंकृत किया। उक्त सभामें त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त उर्द्ध्वमन्थी महाराज, त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद् भक्तिवेदान्त विष्णुदेवत महाराज, त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद् भक्तिवेदान्त न्यासी महाराज आदि त्रिदण्डिपादगण, विशिष्ट ब्रह्मचारीवृन्द और कई गृहस्थ भक्तोंने श्रील प्रभुपादजीके अतिमर्त्य जीवन चरित्रकी आलोचना की। अन्तमें सभापति महाराजने भाषण प्रदान किया। उन्होंने कहा, "ये अति-

मर्त्य महापुरुष उपदेशोंके मूर्त्तिमान स्वरूप थे। गौड़ीय वेदान्ताचार्य भास्कर श्रील बलदेव विद्याभूषण प्रभुके पश्चात् तिमिराच्छन्न गौड़ीय गगनको इन्होंने ही पुनः आलोकित किया। वेदान्तका यथार्थ तात्पर्य उनके कृपाभिषिक्त निजजनोंने निर्भीक कण्ठसे प्राच्य और पाश्चात्य जगतमें विपुलरूपसे प्रचार किया है और कर भी रहे हैं। भारतीय दर्शनशास्त्रके प्रकृत प्रतिपाद्य विषयका पाश्चात्य जगतमें वितरण करनेमें मूल प्रेरणास्रोत यही महापुरुष थे। वे निर्भीक पथ-प्रदर्शक थे। असीम व्यक्तित्व सम्पन्न महापुरुषोंकी बात साधारण मनुष्य समझनेमें असमर्थ हैं। इसलिए कई व्यक्ति अपनी सुविधामें बाधा पड़ते देखकर उनकी वाणीको विषतुल्य समझते हैं। अस्मदीय श्रील गुरुपादपद्म नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद् भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजने श्रीलप्रभुपादजीकी चिन्ताधारा की आलोचना प्रसङ्गमें कहा था कि साधारण लोग श्रील प्रभुपादजीकी चिन्ताधाराको ग्रहण नहीं कर सकते और इसलिए असल वस्तुको छोड़कर मनखुशी धर्मका पालन करनेसे काम नहीं चलेगा। श्रील प्रभुपादजीने इस प्रसङ्गमें कहा था—"मूर्ख और सुविधावादियोंके लिये भागवत धर्म नहीं है। साधारण जगतमें मनुष्योंमें प्रत्येक व्यक्ति ही एम० ए० या पी० एच० डी० पास नहीं कर सकता। प्रत्येक व्यक्तिको पी० एच० डी० करानेके लिए विश्वविद्यालयके निश्चित शिक्षा-मापदण्डको घटाया नहीं जा सकता। ऐसा करने पर उच्च शिक्षाका वैशिष्ट्य संरक्षित नहीं हो सकता। ठीक-ठीक रूपसे यदि एक जीव भी उस तत्त्वको जाननेकी सुविधा प्राप्त करें, तो यही पर्याप्त है। अत्यन्त अल्प जीव ही आत्मकल्याण करनेकी सार्थकता बोध करते हैं। इसके लिये दुःख करनेका कोई कारण नहीं है। क्योंकि विद्यालयोंमें अच्छे छात्र कम ही निकलते हैं। एकमात्र चन्द्र ही सुशीतल प्रकाश प्रदान करता है। जगतमें मूल्यवान धातुकी अल्प परिमाणता है। अल्प लोग ही भागवत धर्मका याजन कर सकते हैं। जगतके अधिकांश बुद्धिमान व्यक्ति ही श्रीमद् भगवद्गीताका समादर करते हैं—भले ही वे किसी भी क्षेत्रके क्यों न हो। गीतामें कहा गया है—'मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये। यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः।' सकल शास्त्र शिरोमणि श्रीमद्भागवतमें कहा गया है—

रजोभि समसंख्याताः पार्थिवैरिह जन्तवः।
तेषां ये केचनेऽन्ते श्रेयोः वै मनुजादयः॥
प्रयो मुमुक्षवन्तेषां केचनैव द्विजोत्तम।
मुमुक्षुणां सहस्रेषु कश्चिद मुच्येतसिध्यति॥
मुक्तानामपि सिद्धानां नारायण-परायणः।
सुदुर्लभः प्रशान्तात्मा कोटीष्वपिमहामुने॥

(श्री भा० ६।१४।३-५)

अतएव चिन्ता करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। कलि कवलित जीव मायाके प्रति अवश्य ही आसक्त होंगे। ऐसी अवस्थामें भी

हम लोग आत्मचेतनताको मनमें रखते हुए समस्त विश्वमें निर्भीक रूपसे भागवत-धर्मका विपुलरूपसे प्रचार करनेकी चेष्टा करेंगे।" श्रील आचार्यदेवने श्रील प्रभुपादजीकी चिन्ता-धाराकी विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालकर अपना भाषण समाप्त किया। इसके पश्चात् श्रीहरिकीर्त्तनके माध्यमसे सभाकी इतिश्री हुई।

उक्त दिवस श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें भी यह उत्सव बड़े उत्साहके साथ मनाया गया। प्रातःकालीन पाठ-कीर्त्तनके पश्चात् श्रीलप्रभुपादजीकी उपदेशावलीका पाठ किया गया। शामको पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद् नारायण महाराजके सभापतित्वमें एक सभाका आयोजन किया गया। मठस्थ ब्रह्मचारियों के भाषणोंके पश्चात् श्रील सभापति महाराज ने श्रील प्रभुपादजीके अतिमर्त्य जीवनचरित्रके विभिन्न पहलुओं पर विशदरूपसे प्रकाश डाला।

अन्यान्य शाखा मठोंमें भी यह उत्सव विपुलरूपसे मनाया गया। उपस्थित सभी सज्जनों को प्रचुर रूपमें महाप्रसाद वितरण किया गया।

श्रीअद्वैत सप्तमी और श्रीनित्यानन्द त्रयोदशीका अनुष्ठान

गत २१ माधव, १० माघ, २४ जनवरीको महाविष्णुके अवतार श्रील अद्वैताचार्यजी तथा २८ माधव, १७ माघ, ३१ जनवरीको श्रीनित्यानन्द प्रभुकी आविर्भाव-तिथि-पूजा समितिके मूलमठ और सभी शाखा मठोंमें उपवास, पाठ-कीर्त्तन-प्रवचन आदिके माध्यमसे सम्पन्न हुए हैं। उक्त दोनों दिवस ही श्रीश्रील अद्वैताचार्य और श्रीश्रील नित्यानन्द प्रभुके सम्बन्धमें विविध महाजन मदावलियोंका कीर्त्तन करनेके पश्चात् उनके तत्त्व पर विशद रूपसे प्रकाश डाला गया।

श्रीश्रीव्यास-पूजा महोत्सव

विगत ५ गोविन्द, २४ माघ, ७ फरवरी शुक्रवार के दिन व्यासाभिन्न जगद्गुरु ॐविष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी महाराजकी आविर्भाव-तिथि-पूजाके उपलक्ष्यमें श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके भारत व्यापी सभी मठोंमें २२ माघ, ५ फरवरी कृष्णा तृतीयासे लेकर २४ माघ, ७ फरवरी कृष्णा पंचमी तक तीन दिन श्रीश्री व्यासपूजा बड़े समारोहके साथ सम्पन्न हुई है। प्रथम दिन माघी कृष्णा तृतीयाको श्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती ठाकुरके अन्तरङ्ग प्रियपार्षदवर अस्मदीय श्रीलगुरुपादपद्म नित्यलीला-प्रविष्ट परिव्राजकाचार्यवर्य ॐ विष्णुपाद परमहंस १०८ श्रीश्रीमद्भक्ति प्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी शुभाविर्भाव-तिथिके अवसर पर सर्वत्र ही हरिसंकीर्त्तनके माध्यमसे श्रीश्रीव्यासपूजा और तदङ्गीभूत पूजा-पञ्चक अर्थात् श्रीकृष्ण-पंचक, व्यास-पंचक, मध्वादि

आचार्य-पंचक, सनकादि-पंचक, श्रीगुरु-पंचक और तत्त्व-पंचककी पूजा और होमके पश्चात् श्रीलगुरुपादपद्मके श्रीअशोक - अभय और श्रीकृष्ण-प्रेमद श्रीचरणकमलोंमें उपस्थित श्रीगुरुसेवकोंने श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। शामको विशेष धर्मसभामें हरिकीर्त्तनके पश्चात् श्रीश्रीव्यासपूजाका महत्व,श्रीश्रीव्यासदेवका दान-वैशिष्ट्य एवं श्रीगुरुतत्त्व आदि विषयों पर सारगर्भित भाषण और श्रीचैतन्य भागवतसे श्रीश्रीव्यासपूजा-प्रसङ्ग पाठ आदि कार्यक्रम सुन्दर रूपसे सम्पन्न हुए हैं। दूसरे दिन भी सबेरे शाम श्रीहरिसंकीर्त्तन, भाषण तथा भाक्तगत-पाठ हुआ है। तीसरे दिन जगद्गुरु श्रील प्रभुपादजीकी आविर्भाव-तिथि माघी कृष्णा-पंचमी तिथिके दिन उनके श्रीचरणोंमें श्रद्धाञ्जलि अर्पण करनेके पश्चात् विशेष धर्म-सभाओंमें श्रील प्रभुपादजीके अतिमर्त्य जीवन-चरित्र और उनकी अप्राकृत शिक्षाओंके सम्बन्धमें विभिन्न वक्ताओंने भाषण दिए। अन्तमें सर्वत्र श्रील प्रभुपादजीकी आरति और भोगरागके पश्चात् उपस्थित लोगोंको महा-प्रसाद वितरण किया गया।

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरामें पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद् भक्तिवेदान्त मुनि महाराजकी अध्यक्षतामें उत्सवादि मनाये गये। श्रीपाद प्रेम प्रयोजन ब्रह्मचारी, श्रीपादकुञ्जविहारी ब्रह्मचारी,श्रीनृत्यकृष्ण ब्रह्मचारी,श्रीकृष्ण-स्वामीदास ब्रह्मचारी आदि वक्ताओंने प्रतिदिन कीर्त्तन एवं पुष्पाञ्जलिके पश्चात् सबेरे-शामको श्रीगुरुतत्त्व, श्रीवेदव्यासका चरित्र, उनकी शिक्षा, श्रील प्रभुपादजीका अतिमर्त्य जीवन-चरित्र और शिक्षा—इन विषयों पर विशदरूपसे प्रकाश डाला। प्रथम दिन और तृतीय दिन निमन्त्रित और अनिमन्त्रित सभी वैष्णवोंको तथा सज्जनोंको नानाप्रकार का सुस्वादु महा-प्रसाद वितरण किया गया।

श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठ, नवद्वीपमें श्रीवेदान्त समितिके वर्त्तमान आचार्य पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद् भक्तिवेदान्त वामन महाराजके पौरोहित्यमें यह अनुष्ठान विराट समारोहपूर्वक मनाया गया। स्वयं श्रील आचार्यदेव, विभिन्न त्रिदण्डि संन्यासीगण, विशिष्ट ब्रह्मचारीवृन्द और गृहस्थ भक्तोंने उपरोक्त विषयों पर प्रकाश डालते हुए श्रीव्यासपूजाकी आवश्यकता पर जोर दिया।

श्रीउद्धारण गौड़ीय मठ, चुँचुड़ा, श्रीगोलोकगंज गौड़ीय मठ, आसाम एवं श्रीपिछलदा गौड़ीय मठ, पिछलदा आदि श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके अन्यान्य सभी मठोंमें यह पूजा-अनुष्ठान बड़े समारोहपूर्वक मनाया गया है।

—प्रकाशक